गतांक से आगे...

सार्वभौमिक बंधुत्व का आधार मित्रता

* ब्रह्माकुमार नरेश, मुजफ्फरनगर

भीड़ भरे बाज़ार में परेशान व्यक्ति को यदि दूर से मित्र आता दिख जाए तो होठों पर मुसकान आ जाती है और यदि किसी समारोह में हंसते हुए व्यक्ति को शत्रु दिखाई पड़ जाए तो हंसी गायब हो जाती है। मित्र की मौजूदगी, सभा में बैठे व्यक्ति का ध्यान उतना नहीं खींचती जितना कि शत्रु की मौजूदगी ध्यान खींचती है। यदि अन्तर्मन में सर्व के प्रति मित्रता का भाव समाया हो तो मन:स्थिति सदैव मुसकान भरी होगी। सतयुग में जिधर देखो सभी मित्र (बंधु) ही दिखाई देते हैं। राजयोग के ज्ञान व प्रयोग से सतयुगी मन:स्थिति वर्तमान के कलियुग में भी धारण की जा सकती है। जो सतयुग पहले मित्रयुग था, वह गिरावट में आते-आते अब मानो शत्रुयुग हो गया है। आज मित्रता देखने में तो आती है परन्तु यह है व्यभिचारी मित्रता जिसमें मित्रों के बीच में स्वार्थ व लाभ लेने का भाव अन्तर्मन में समाया रहता है। आज मित्रता के आवरण में एक स्वार्थी मनुष्य दूसरे का दोहन करता है, उससे जैसे-तैसे फायदा उठाने की जुगत में रहता है और मित्रता के रिश्ते को बदनाम करता है।

निन्दा में भी छिपा है कल्याण

कहा गया है, निन्दा हमारी जो करे, मित्र हमारा सो। निन्दा में भी कल्याण छिपा है क्योंकि इससे सहनशक्ति बढ़ती है, अपने अवगुणों या कमियों पर नज़र पड़ती है, कार्य की गुणवत्ता में इज़ाफा होता है और पता चलता है कि हमारे कौन-से ऐसे विरोधी मित्र हैं, जिन्हें अतिरिक्त स्नेह दिया जाना है। जिनके निन्दक होते हैं उनमें सकारात्मक परिवर्तन की संभावना ज्यादा होती है। दर्पण मात्र सामने का मुख दिखलाता है, पीठ नहीं परन्तु निन्दा तो पीठ-पीछे होती है और यह दिखलाती है कि आत्मा कैसी है। निन्दा, निन्दक और जिसकी वह निन्दा करता है, दोनों की ही कमियां दिखलाती है। निन्दित व्यक्ति में इतनी तो सूक्ष्म कमी होगी ही कि वह ईश्वर प्रदत्त प्रेम के गुण के होते हुए भी निन्दा करने वाले के दिल को जीत न सका।

मित्र वो, जो निखरे और निखारे

यदि कोई चाहता है कि उसके मित्रों की संख्या बढ़े, तो उसे चाहिए कि अन्य लोगों को वह अपने से आगे निकल जाने दे। इससे प्रत्यक्ष रूप में तो दूसरे उससे आगे दिखेंगे परन्तु अप्रत्यक्ष रूप में वह औरों से आगे होगा। ईश्वरीय ज्ञान कहता है कि औरों को आगे बढ़ाना ही आगे बढ़ना है या देना ही लेना है। आज औरों से आगे निकलना, ईर्ष्यालुओं (शत्रुओं) की संख्या के बढ़ने का कारण बनता है। तो श्रेष्ठ यही है कि दूसरों को आगे किया जाए। सच्चा सुख जीतने में नहीं बल्कि जिताने में है, लेने में नहीं बल्कि देने में है। यदि दूसरों को विकार मुक्त बनाने की रूहानी सेवा की जाए, तो दूसरों के परिवर्तन होते ही निमित्त व्यक्ति के व्यक्तित्व में और भी निखार आता है और किसी को बुरा भी नहीं लगता। खार (जलन, वैर) और निखार (निर्मलता, स्वच्छता) व्यक्तित्व के दो विपरीत पहलू हैं। मित्र वो, जो निखरे और निखारे।

भाना और निभाना

दो शब्दों का काफी प्रचलन है, जो हैं भाना व निभाना। भाना अर्थात् जो मन को अच्छा लगे, उसे आकर्षित करे। निभाना अर्थात् मन के न चाहते हुए भी, या विकर्षण होते हुए भी किसी से सामान्य सम्बन्धों की औपचारिकता बनाए रखना। ट्रेन में सहयात्री अनुकूल न हो, तो भी आपको उसके साथ बैठना, निभाना होता है। पड़ोसी को बदला नहीं जा

सकता अत: वह जैसा भी है, उससे संबंध निभाना होता है। इसमें बुद्धि की सात्विकता, मन की निर्मलता और पर-कल्याण की भावना सूक्ष्म कार्य करती है। श्रेष्ठ I.Q. (Intelligence Quotient) से संबंध बनते हैं, परीक्षाओं में सफल हो जाते हैं व नौकरी मिल जाती है परन्तु श्रेष्ठ E.Q. (Emotional Quotient) से संबंध निभाए जाते हैं और नौकरी बनी रहती है।

सहयोग मित्रता का प्राण है। सहयोग अर्थात् मित्रों की अपनी अलग-अलग विशेषताएं या कमज़ोरियाँ होते हुए भी एक साथ आगे बढ़ कर जीवन में उपलब्धियां हासिल करना । दो मित्र थे, जिनमें एक लंगड़ा था और दूसरा अंधा। जब कहीं जाना होता था, तो अंधा अपने लंगड़े मित्र को कंधे पर बैठा लेता था और फिर लंगड़ा अपने अंधे मित्र को सामने का रास्ता दिखाता रहता था। इस प्रकार उनकी मित्रता ने आपसी सहयोग से शारीरिक अपंगता को रुकावट नहीं बनने दिया। बड़े-बड़े कार्य सहयोग की शक्ति से पूरे किए जाते हैं।

ईश्वर को पसंद है बेहद का मैत्रीभाव

पहले पेन फ्रैंड बनाने का चलन हुआ करता था। अब फेसबुक के द्वारा या इन्टरनेट के द्वारा मित्रता की जाती है। परन्तु यह मित्रता नहीं बल्कि समय की फिजूलखर्ची या मित्रता के नाम पर ठगी करना है। इसके विपरीत, संसार के समस्त प्राणियों के प्रति शुभ भावना, शुभ कामना व मित्रता के प्रकंपनों का संप्रेषण करना कल्याणकारी कर्म है जिससे कल्याणकारी ईश्वर की मित्रता स्वत: प्राप्त हो जाती है। ऐसे व्यक्ति के मन में एक से बढ़ कर एक सुन्दर संकल्प व आन्तरिक खुशी हिलोरें मारती रहती है क्योंकि उसे ईश्वर के प्रेममय प्रकंपन प्राप्त होते रहते हैं। हम अपने सामर्थ्य अनुसार अपने आस-पास के प्राणियों का कल्याण करते रहें, तो ईश्वर की नज़र हम पर इस भाव से पड़ती है कि मेरे कल्याण के कार्य में सहयोगी यह बच्चा कितना प्यारा है। ईश्वर हमें आस-पास महसूस होगा। बस ईश्वर की नज़र में आने के लिए बेहद का मैत्रीभाव चाहिए।

सच्ची मित्रता है वटवृक्ष की तरह

झूठी मित्रता कद्दू (gourd) की बेल की तरह होती है, जो उस दीवार को ही कमज़ोर कर देती है जिस पर वह फलती-फूलती है। परन्तु सच्ची मित्रता तो उस वटवृक्ष की तरह होती है जिसके नीचे उसे रोपने वाले की कई पीढ़ियां छाया व पनाह पाती हैं। वटवृक्ष पर सब्जियों की बेल फैल जाए तो इसे कोई फर्क नहीं पड़ता। उसी प्रकार वसुधैव कुटुंबकम् की मनोवृत्ति वाले सेवाधारी के चाहे कितने भी ईर्ष्यालु व विरोधी पीछे पड़ जाएं, उसे फर्क नहीं पड़ता। शिव बाबा की ग्लानि किए जाने पर भी उनका कल्याणकारी कार्य सभी को ऊँचा उठाता है।

सिकंदर की विश्व-विजय नहीं, विश्व-पराजय

आर्थिक स्थिति में समानता न होने पर भी श्रीकृष्ण और सुदामा की मित्रता की मिसाल आज भी दी जाती है। सुग्रीव और श्रीराम की मित्रता का आधार साझा मित्र हनुमान और साझा शत्रु रावण था। शत्रु अर्थात् सात त्रुटियां अर्थात् आत्मा में निहित सात मौलिक गुणों का कार्यरत न होना। यदि ये कार्य करने लगें, तो सभी मित्र दिखाई देंगे। मित्रता वो, जो मन को भाए। सिकन्दर विश्व विजय पर नहीं बल्कि विश्व-पराजय पर निकला था क्योंकि वो तो विश्व में शत्रुता का साम्राज्य फैलाता जा रहा था। जब दूसरे उसे विजयी मानते, तब ही वह विजेता कहलाता परन्तु उसे सभी मन से शत्रु मानने लगे थे। सभी के दिल को जीतना ही विजय प्राप्त करना है, जो कि सिकन्दर नहीं कर सका। उसकी अकाले मृत्यु करोड़ों सताए गए मनुष्यों के दिल से निकली बद्-दुआओं के कारण हुई थी।

(क्रमश:)